पूर्व ऐतिहासिक काल एवं आद्य ऐतिहासिक काल
(Pre-Historic Period and Proto-Historic Period)

■ पूर्व ऐतिहासिक काल एवं आद्य ऐतिहासिक काल (Pre-Historic Period and Proto-Historic Period)

पूर्व ऐतिहासिक काल उसे कहा जाता है जिस काल के अध्ययन में केवल पुरातात्विक सामग्री ही उपलब्ध हो, परन्तु साहित्यिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं हो। जिस काल के अध्ययन के लिए पुरातात्विक और साहित्यिक दोनों प्रकार की सामग्रियाँ उपलब्ध हों, परन्तु साहित्यिक साक्ष्य का उपयोग नहीं हो पा रहा हो, तो हम उसे आद्य-ऐतिहासिक काल कह सकते हैं। इस आधार पर हड़प्पा सभ्यता एवं वैदिक सभ्यता को भी आद्य-ऐतिहासिक काल में रख दिया जाता है क्योंकि पहले के पास एक लिपि तो है, परन्तु उस लिपि को पढ़ा नहीं जा सका है, जबकि दूसरे के पास भाषा है, किन्तु लिपि नहीं है।

परन्तु विभाजन का एक दूसरा आधार भी है। इसके अनुसार जिस काल में कृषि की शुरूआत नहीं हुई हो उसे पूर्व-ऐतिहासिक काल कहते हैं। दूसरे शब्दों में, पूर्व ऐतिहासिक काल के क्रम में हम उन आदिमानवों का अध्ययन करते हैं जो पत्थर के उपकरणों का प्रयोग करते थे तथा शिकार एवं खाद्य संग्रह पर निर्भर थे। उदाहरण के लिए, पुरापाषाण काल एवं मध्यपाषाण काल। वहीं दूसरी तरफ, जिस काल में कृषि कार्य आरम्भ हुआ उसे आद्य-ऐतिहासिक काल करार दिया गया अर्थात् आद्य ऐतिहासिक काल में उन समुदायों का अध्ययन किया जाता है जो खाद्य संग्रह से खाद्य उत्पादन की अवस्था में पहुँच चुके थे। इस आधार पर नवपाषाण काल और ताम्रपाषाण काल को भी आद्य-ऐतिहासिक काल के अन्तर्गत रख दिया जाता है।

- **पुरापाषाण काल (लाखों वर्ष पूर्व से लेकर 10,000 ई.पू. तक)**- भारत में आरम्भिक मानव के विकास को प्रस्तर युग से जोड़कर देखा जा सकता है। भारतीय उपमहाद्वीप में पुरापाषाण काल से मानव गतिविधियाँ देखने को मिलती हैं। इस काल में मानव शिकारी एवं खाद्य संग्राहक था।
- **मध्यपाषाण काल (10,000 ई.पू. से 6000 ई.पू.)**- पुरापाषाण काल एवं नवपाषाण काल के बीच एक अवस्था की परिकल्पना की गयी, इसे मध्यपाषाण काल के नाम से जाना गया। इस काल में भी मानव शिकारी एवं खाद्य संग्राहक ही था, परन्तु शिकार एवं खाद्य संग्रह पद्धति में परिवर्तन आ चुका था।
- **नवपाषाण काल (6000 ई.पू. के बाद)**- इस काल में मानव खाद्य संग्राहक से खाद्य उत्पादक की अवस्था में पहुँच गया तथा स्थायी जीवन जीने लगा। इस कारण आगे के परिवर्तनों का मार्ग तैयार हुआ। आरम्भ में भारत में प्राचीनतम् नवपाषाण कालिक स्थल बलूचिस्तान में मेहरगढ़ को माना जाता था, परन्तु अब यह स्थान उत्तरप्रदेश में लहुरदेव को दिया जाता है।
- **ताम्रपाषाण काल (3500 ई.पू. के पश्चात्)**- मानव ने धातु के रूप में पहले ताँबे का प्रचलन आरंभ किया। ताँबे के उपकरणों के प्रचलन से कृषि अर्थव्यवस्था और भी मजबूत हुई। सबसे आरंभिक ताम्रपाषाण कालिक स्थल उत्तर-पश्चिम भारत में मिले हैं।
- **हड़प्पा सभ्यता (2600 ई.पू.-1900 ई.पू.)**- बेहतर कृषि उत्पादन एवं उन्नत व्यापार के कारण उत्तर-पश्चिम भारत का एक भाग नगरीकरण की दिशा में आगे बढ़ गया।

■ परिवर्तन का अध्ययन-

- जलवायु संबंधी कारक → तकनीकी परिवर्तन → जीविकोपार्जन में परिवर्तन → सामाजिक संबंधों में परिवर्तन → सांस्कृतिक दृष्टिकोण में परिवर्तन।

■ जलवायु संबंधी कारक:

अगर हम जलवायु संबंधी कारक पर नजर डालते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि पुरापाषाण काल 'प्लीस्टोसीन युग' की उत्तर अवस्था से जुड़ा हुआ था। तब वातावरण में अधिक ठंडक थी और कृषि के लिए स्थिति अधिक अनुकूल नहीं हुई थी। परन्तु लगभग 10,000 ई.पू. में 'होलोसीन युग' का आरंभ हुआ, जब वातावरण शुष्क हुआ। इससे कृषि के लिए अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न हुई। इस प्रकार, नवपाषाण काल से कृषि आरंभ हुई और आगे के काल में उसकी प्रगति होती रही।

■ तकनीकी विकास:

पुरापाषाण काल में लोग पत्थर और सम्भवतः हड्डियों के उपकरणों का प्रयोग करते थे। इस काल में क्रोड उपकरणों का महत्व बना हुआ था। क्रोड (core) उपकरण से तात्पर्य भारी स्फटिक पत्थर से निर्मित उपकरण से है। इनमें हस्तकुठार, चॉपर (काटने वाला औजार) एवं विदारिणी (cleaver) जैसे उपकरण मिले हैं। उदाहरण के लिए, पंजाब में सोहन नदी घाटी से चॉपर जैसे उपकरण का साक्ष्य मिला है, तो दक्षिण में मद्रास के आस-पास कई स्थलों से हस्तकुठार जैसे उपकरण। परन्तु क्रोड उपकरणों के साथ-साथ शल्क उपकरण (Flake) का भी प्रयोग होता रहा। शल्क उपकरण पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों से बनाये जाते थे तथा ये धारदार होने के साथ-साथ हल्के भी होते

थे। इसकी श्रेणी में हम तक्षिणी, खुरचनी (Scraper) जैसे उपकरणों को रख सकते हैं।

मध्यपाषाण काल तक आकर 'माइक्रोलिथ' जैसे उपकरणों का विकास देखने को मिलता है। यह 1 सेमी. से 5 सेमी. के बीच के छोटे पाषाण उपकरण होते थे, जिनका प्रयोग लकड़ी अथवा हड्डी से जोड़कर किया जाता था। इसके परिणामस्वरूप तीर और कमान का विकास हुआ। आगे नवपाषाण काल में तकनीकी विकास के रूप में पॉलिशदार उपकरणों का प्रयोग देखने को मिलता है। दूसरे शब्दों में, जहाँ पहले पत्थर से पत्थर को तोड़कर उपकरण बनाए जाते थे, जो खुरदरे होते थे, परन्तु अब पत्थर से पत्थर को घिसकर उपकरण बनाए जाने लगे, जो अधिक चिकने होते थे और इनके माध्यम से खेती करना आसान हो गया।

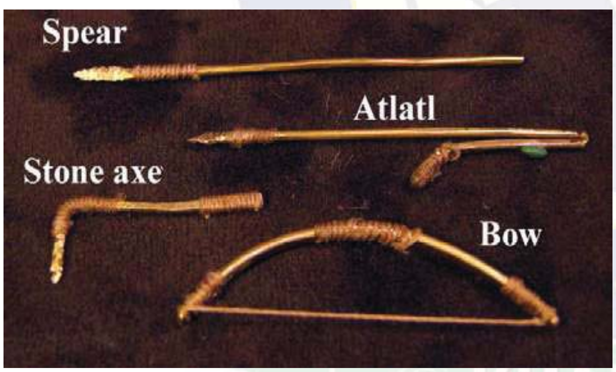

■ **जीविकोपार्जन में परिवर्तन:**

पुरापाषाण काल में मानव मुख्यत: शिकारी एवं खाद्य संग्राहक था। शिकार की तुलना में खाद्य संग्रह निश्चय ही ज्यादा महत्वपूर्ण रहा होगा क्योंकि जो संग्रह किया हुआ खाद्य था, उसे सुरक्षित रखना अधिक आसान था।

यद्यपि मध्यपाषाण काल में भी लोग मुख्यत: शिकारी और खाद्य संग्राहक ही बने रहे, परन्तु शिकार एवं खाद्य संग्रह की तकनीकी में परिवर्तन आ गया था। तीर और कमान के प्रयोग से अब बड़े पशुओं के साथ-साथ छोटे पशु एवं पक्षियों का शिकार करना भी संभव हुआ। साथ ही, मछली पकड़ने की कला भी विकसित हुई। इस कारण खाद्यान्न की उपलब्धता बढ़ गई। फिर इस काल में हमें पशुपालन का आरम्भिक साक्ष्य मध्यप्रदेश के आदमगढ़ एवं राजस्थान के बागोर से मिलता है। यद्यपि इस काल में खेती की शुरूआत नहीं हुई थी, परन्तु जंगली किस्म के अनाजों का प्रयोग आरम्भ हो गया था।

नवपाषाण काल में आकर जीविकोपार्जन के क्षेत्र में प्रमुख परिवर्तन आया। अब मानव, शिकारी और खाद्य संग्राहक से खाद्य उत्पादक की अवस्था में पहुँच गया और फिर इतिहास में महत्वपूर्ण परिवर्तन शुरू हुए। इस काल में नियमित रूप में पशुपालन एवं कृषि कार्य आरम्भ हुआ। वैसे तो मृदभांडों के प्रयोग का साक्ष्य मध्यपाषाण काल से ही मिलने लगता है, किन्तु नियमित रूप में इनका प्रयोग नवपाषाण काल में आरम्भ हुआ। नवपाषाण काल को 'नवपाषाण क्रांति' का नाम दिया जाता है क्योंकि जब कृषि कार्य आरम्भ हुआ, तो फिर आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तनों को प्रोत्साहन मिला।

आगे प्रथम धातु के रूप में ताँबे का प्रचलन आरम्भ हो गया, इसे 'ताम्रपाषाण काल' के नाम से जाना जाता है। चूँकि ताँबे के उपकरण पत्थर के उपकरण से कहीं अधिक बेहतर थे, इसलिए ताम्रपाषाण काल में आकर कृषि अर्थव्यवस्था और भी मजबूत हुई।

■ **सामाजिक परिवर्तन-**

पुरापाषाण काल में समाज समतामूलक समाज का उदाहरण है। इसे 'बैंड सोसायटी' का नाम दिया जाता है। लोग शिकार और खाद्य संग्रह से उतना ही अर्जन करते थे, जितना खपत हो जाता था और अतिरिक्त उत्पादन की गुंजाइश नहीं थी। अब जहाँ तक पुरुष-महिला संबंध का सवाल है तो इस संबंध में मानवशास्त्रियों की सामान्य धारणा है कि महिलाओं की स्थिति का निर्धारण उत्पादन में उसकी भागीदारी के आधार पर किया जा सकता है। चूँकि महिलाएँ मुख्यत: खाद्य संग्रह से जुड़ी हुईं थीं और शिकार की तुलना में खाद्य संग्रह को अधिक महत्व प्राप्त था, इसलिए सामान्यत: महिलाओं की स्थिति समाज में अधिक बेहतर रही होगी।

मध्यपाषाण काल में भी समाज समतामूलक था। इसे भी बैंड सोसायटी का नाम दिया जा सकता है। पहली बार इसी काल में परिवार की परिकल्पना का विकास हुआ अर्थात् अब बूढ़े व्यक्ति को बच्चों की देखभाल के लिए घर पर छोड़ा जाने लगा। फिर इस काल में मृतक व्यक्ति के शवाधान (Burial) का विकास मृतक संस्कार के रूप में शुरू हुआ।

नवपाषाण काल तथा ताम्रपाषाण काल तक आकर लोग आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने लगे थे। अतः समाज में विभाजन की प्रक्रिया भी शुरू हो गई। इसलिए इस काल में मुखिया तंत्र का विकास हुआ। बैंड सोसायटी का स्थान मुखिया तंत्र ने ले लिया। घरों की बनावट और धान्य कोठारों की उपस्थिति (granaries) एक मुखिया तंत्र की ओर संकेत करती है।

■ **सांस्कृतिक परिवर्तनः**

आरम्भिक मानव का अधिकांश समय जीविकोपार्जन में चला जाता था, परन्तु फिर धीरे-धीरे वह अपने परिवेश के साथ साहचर्य (आदान-प्रदान) स्थापित करने लगा। इसके परिणामस्वरूप धर्म एवं कला का विकास हुआ।

वैसे कला के रूप में हमें हड्डी एवं प्रस्तर की मूर्तियाँ मिलती हैं, परन्तु कला का मुख्य रूप हमें चित्रकला के रूप में देखने को मिलता है।

चित्रकला का विकास- वैश्विक सन्दर्भ में चित्रकला का विकास पुरापाषाण काल से ही माना जाता है। यूरोप, ऑस्ट्रेलिया और अफ्रीका आदि महाद्वीपों से हमें ये चित्र मिले हैं। भारत के संदर्भ में एक दृष्टिकोण यह कहता है कि मध्य प्रदेश में भीमबेटका के कुछ चित्र पुरापाषाण काल की उत्तर अवस्था से जुड़े हुए हैं, परन्तु सामान्य धारणा यह है कि भारत में चित्रकला का स्पष्ट साक्ष्य मध्यपाषाण काल में आकर मिलता है।

■ **मध्यपाषाण काल में कैसे चित्र बनाए गए?**

इसमें प्रायः दो प्रकार से चित्र बनते थे- एक, गुफा की दीवार अथवा प्रस्तर को खुरचकर, इसे 'पेट्रोग्लिफ' कहा जाता है तथा दूसरे, रंगों का उपयोग कर। सामान्यतः 16 प्रकार के रंगों का विवरण मिलता है। ये चित्र या तो गुफाओं के अन्दर बनाए जाते थे या गुफा से बाहर चट्टानों पर।

■ **मध्यपाषाण कालीन चित्रकला के विषयः**

- शिकार के दृश्य, सामूहिक नृत्य एवं संगीत के चित्र, महिलाओं के द्वारा खाद्य संग्रह के चित्र, गर्भवती महिलाओं के चित्र, महिलाओं के द्वारा अपने शिशुओं को पालने का चित्र आदि।

■ **मध्यपाषाण कालीन चित्रों से तात्पर्यः**

- संभव है लिपि की अनुपस्थिति में मध्यपाषाण कालीन मानव इन चित्रों के माध्यम से अपने भाव को अभिव्यक्त करने का प्रयास कर रहे थे। लिपि के अभाव में ये चित्र ही बोलते प्रतीत होते हैं।
- यह भी संभव है कि शिकार पर जाने से पहले वे इन चित्रों के माध्यम से किसी अनुष्ठान को पूरा करते, ताकि उन्हें बेहतर रूप में शिकार मिल सके। इसका अर्थ है कि इन चित्रों का आनुष्ठानिक महत्व भी था।

■ **मध्यपाषाण कालीन चित्रों का महत्वः**

- लिपि की अनुपस्थिति में चित्र बोलते प्रतीत होते हैं।
- शिकार वाले दृश्य से ऐसा प्रतीत होता है कि लोगों के मन में करुणा का भाव जग रहा था। प्रायः शिकार के दृश्य में शिकारियों को सशरीर न दर्शाकर सांकेतिक रूप में दर्शाया गया है। इसका अर्थ है कि शिकार के मध्य जो पशु हत्या होती थी उससे उन्हें पीड़ा होती थी, इसलिए वे अपने आपको उससे सीधे तौर पर नहीं जोड़ना चाहते थे। उसी प्रकार, अकेला शिकार का चित्र न होना भी इस बात को दर्शाता है कि मानव अपने आप को हिंसा से प्रत्यक्ष रूप से नहीं जोड़ना चाहता था।
- सामूहिक दावत एवं समारोह के चित्र ये दर्शाते हैं कि उनके जीवन में अब सामूहिकता की भावना प्रबल हो रही थी, अर्थात् अब समुदाय की भावना मजबूत होने लगी थी।
- इन चित्रों में जो नृत्य एवं संगीत के दृश्य हैं, वे दर्शाते हैं कि लोगों के जीवन में 'लय' की तलाश आरंभ हो गयी थी।

- ■ **मध्यपाषाण कालीन चित्रकला में सौन्दर्य-बोध:**
  - मानव में उभर रहा करुणा का भाव
    - माता के द्वारा शिशु के पालने का दृश्य।
    - शिकार वाले दृश्य
  - लय की तलाश
- ■ **मध्यपाषाण कालीन चित्रकला का सौन्दर्य-बोध आधुनिक चित्रकला से कहाँ तक तुलनीय है?**

- मध्यपाषाण कालीन चित्रकला का उद्देश्य भी लय को तलाशना था और वर्तमान चित्रकला का उद्देश्य भी लय की तलाश है।
- मध्यपाषाण कालीन चित्रकला में भी प्रतीकात्मकता थी तथा वर्तमान चित्रकला में भी प्रतीकात्मकता है।
- मध्यपाषाण कालीन चित्रकला आदिमानव के सरल भावों की अभिव्यक्ति है, वहीं आधुनिक चित्रकला आधुनिक मानव के जटिल भावों की अभिव्यक्ति है।

प्रश्नः- भारत की मध्यपाषाण शिला-कला न केवल उस काल के सांस्कृतिक जीवन को, बल्कि आधुनिक चित्रकला से तुलनीय परिष्कृत सौन्दर्य-बोध को भी प्रतिबिम्बित करती है। इस टिप्पणी का समालोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए। (UPSC-2015)

उत्तरः- मध्यपाषाण काल मानव जीवन की उस अवस्था को दर्शाता है, जब मानव, शिकारी एवं खाद्य संग्राहक था। वह पाषाण उपकरणों की सहायता से जीवन-यापन करता था। परंतु उस काल में भी मानव ने परिवेश के संबंध में अपनी समझ को दुर्लभ गुफा चित्रों में अभिव्यक्त किया।

मध्यपाषाण काल के चित्र मध्य प्रदेश में भोपाल के निकट भीमबेटका, मिर्जापुर में सुहागीघाट की गुफा, उड़ीसा के सुंदरगढ़ एवं संभलपुर आदि स्थानों पर मिले हैं जो विभिन्न कालों से संबद्ध हैं। दक्षिण भारत में भी आंध्र प्रदेश, कर्नाटक तथा तमिलनाडु के कई स्थानों से ये चित्र मिले हैं। इन चित्रों में शिकार के दृश्य, सामूहिक नृत्य, संगीत, उपकरण, माता-बच्चे, गर्भवती स्त्री, मनुष्यों द्वारा मृत जानवरों को उठाते हुए आदि दृश्य शामिल हैं। इस प्रकार इन चित्रों में विविधता दिखती है। एक दिलचस्प तथ्य यह है कि इन गुफा चित्रों में पुरूषों को रेखीय रूप में चित्रित किया गया। इसका कारण संभवतः पुरूषों का शिकार गतिविधियों से जुड़ा होना था। शिकार के मध्य पशुओं को घायल करना तथा मारना होता था। इस प्रकार की गतिविधियाँ एक प्रकार का भावनात्मक तनाव पैदा करती थी। संभवतः इसलिए ऐसे दृश्यों में स्पष्ट प्रतिनिधित्व न देकर सांकेतिक प्रतिनिधित्व दिया जाता था। इस प्रकार मध्यपाषाणकालीन चित्रों में आदिमानव के मनोभाव अभिव्यक्त हुए हैं। लिपि की अनुपस्थिति में चित्र भी बोलने का प्रयास करते नजर आते हैं।

सांकेतिकता तथा विविधता में यह कला कहीं-कहीं आधुनिक चित्रकला के निकट प्रतीत होती है, यद्यपि दोनों के स्वरूप में अंतर है। मध्य पाषाणकालीन चित्रकला आदिमानव के सरल भावों की अभिव्यक्ति है। आदिमानव अपने परिवेश को समझने का प्रयास कर रहे हैं तथा उन्होंने अपनी इस समझ को चित्रकला के रूप में व्यक्त किया। दूसरी तरफ आधुनिक जीवन पाषाणकालीन जीवन की तुलना में बहुत अधिक जटिल है। आधुनिक मानव का बोध भी बहुआयामी है। अतः आधुनिक जीवन अपनी संपूर्ण जटिलता के साथ आधुनिक चित्रकला में अभिव्यक्त हुआ है।

- ■ **हम मध्यपाषाण कला का अध्ययन क्यों करते हैं?**

- इन कलाओं के माध्यम से हम हजारों वर्ष पीछे जाकर आरम्भिक मानव की सोच, दृष्टिकोण तथा सौन्दर्य-बोध को समझने का प्रयास करते हैं क्योंकि वे मानव सभ्यता की विरासत हैं, इसलिए इनका आज भी महत्व है।

भारत की प्रथम नगरीय सभ्यताः हड़प्पा सभ्यता (2600 ई.पू. से 1900 ई.पू.)

- ■ **हड़प्पा सभ्यता जैसी एक असाधारण सभ्यता की जड़ कहाँ है?**

हड़प्पा सभ्यता जैसी उन्नत सभ्यता का अध्ययन इतिहासकारों के लिए हमेशा दिलचस्पी एवं चुनौती का विषय रहा है। मुख्य प्रश्न यह है कि जब भारतीय उपमहाद्वीप के अन्य क्षेत्र विकास के निम्न स्तर पर थे, तो कुछ खास क्षेत्र नगरीकरण की अवस्था में कैसे पहुँच गए?

कुछ ब्रिटिश विद्वानों ने प्राचीन भारतीयों की भूमिका को कम करने के लिए मेसोपोटामिया से इसकी उत्पत्ति को दर्शाने का प्रयास किया, परन्तु हड़प्पा सभ्यता मेसोपोटामिया की सभ्यता की तुलना में कहीं अधिक उन्नत थी। इसकी नगर निर्माण योजना अद्वितीय थी तथा इसकी लिपि एवं मुहरें भी अलग थीं। इसलिए हड़प्पा सभ्यता को मेसोपोटामियाई उत्पत्ति कहना बिल्कुल ही उचित नहीं है।

बाद के काल के शोधों से लगभग इसकी देशी उत्पत्ति सिद्ध हो चुकी है। उत्तर-पश्चिम की नदी घाटी में बाढ़ से लायी गई जलोढ़ मिट्टी काफी ऊपजाऊ सिद्ध हुई। इस कारण लोग आवश्यकता से अधिक अनाजों का उत्पादन करने लगे। फिर कृषि अधिशेष ने शिल्पों और उद्योगों के विकास को प्रोत्साहन दिया। उसी समय एक शासक वर्ग एवं पुरोहित वर्ग का उद्भव हुआ। उसके द्वारा अधिशेष उत्पादन को कर एवं धर्म के माध्यम से एक खास केन्द्र पर एकत्रित किया गया।

फिर वही समय है कि जब धान्य कोठारों का विकास हुआ, ताँबे से काँसे का विकास हुआ। इसने उत्पादन में अधिक बेहतर भूमिका निभाई। फिर स्थल एवं जल परिवहन के रूप में क्रमशः गाड़ी एवं नाव का प्रचलन शुरू हो गया। फिर यही काल है जब लेखन कला का भी विकास हो गया था। उपर्युक्त विकास का परिणाम था लगभग 2600 ई.पू. में एक उन्नत नगरीय सभ्यता का विकास।

- **इसे एक विलक्षण सभ्यता क्यों माना जाता है?**

कई कारकों ने इसे एक विलक्षण सभ्यता के रूप में स्थापित किया और निश्चय ही इनमें सबसे महत्वपूर्ण कारक है हड़प्पा सभ्यता की उन्नत नगर निर्माण योजना। इन कारकों को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है-

- **उन्नत नगर-निर्माण योजनाएँ:**

हड़प्पा सभ्यता के समानान्तर पश्चिम एशिया में मेसोपोटामिया की सभ्यता और उत्तरी-पूर्वी अफ्रीका में मिस्र की सभ्यताएँ थीं। ये सभी समकालीन व नगरीय सभ्यताएँ थीं, परन्तु हड़प्पा सभ्यता की नगर-निर्माण योजना सबसे विलक्षण थी।

सामान्यतः हड़प्पाई नगर दो भागों में विभाजित होता था- पश्चिमी भाग में दुर्ग क्षेत्र होता था तथा पूर्वी भाग में निचला शहर। दुर्ग क्षेत्र में शासक वर्ग के लोग रहते थे, जबकि निचले क्षेत्र में जनसामान्य लोग। हड़प्पाई नगरों की योजना ग्रिड प्रणाली पर आधारित थी। मुख्य सड़क की चौड़ाई लगभग 10 मीटर होती थी और दो सड़कें एक-दूसरे को समकोण पर काटती थीं। सड़कों के किनारे मकान निर्मित किए जाते थे। ये पक्की ईंटों से निर्मित होते थे। सामान्यतः मकान एक मंजिला होता था, परन्तु बहुमंजिले मकान के भी उदाहरण मिलते हैं। मकान के प्रांगण में कुआँ होता था तथा ऊपर की मंजिल पर जाने के लिए सीढ़ियाँ होती थीं।

उनकी जल निकास प्रणाली समकालीन विश्व में दुर्लभ थी। ऊपर की मंजिल से जल निकासी के लिए निकास पाइप होता था। वह पीछे गली की नाली से मिलता था और गली की नाली मुख्य सड़क की नाली से जुड़ी होती थी। मुख्य सड़क की नाली की सफाई के लिए नरमोखे (Manhole) भी बने होते थे।

उनके द्वारा अपनाई गई जल संरक्षण की नीति भी अद्वितीय है। इसका ज्वलंत उदाहरण है- गुजरात का धौलावीरा।

हड़प्पाई नगरों में बेहतर गवर्नेंस देखने को मिलता है क्योंकि नगर-निर्माण के नियमों में कहीं भी उल्लंघन नहीं मिलता है।

हड़प्पाई दुर्ग

- **जनसामान्य की स्थिति:**

अगर हम अन्य समकालीन सभ्यताओं से हड़प्पा सभ्यता के शासक वर्ग की तुलना करते हैं तो अंतर स्पष्ट हो जाता है। हड़प्पाई शासक वर्ग के लोगों की दृष्टि अपेक्षाकृत समतामूलक थी। जहाँ मेसोपोटामिया एवं मिस्र के शासक वर्ग ने अत्यधिक संसाधन का उपयोग क्रमशः जिग्गुरत (मंदिर) तथा पिरामिड (स्मारक) के निर्माण पर खर्च किया था, जबकि जनसामान्य झोपड़ी अथवा कच्ची ईंटों के मकान में रहते थे, वहीं हड़प्पाई शासक वर्ग ने सार्वजनिक भवनों के निर्माण पर कम खर्च किया जबकि जनसामान्य के जीवन स्तर को ऊँचा उठाया। जनसामान्य पक्की ईंटों के मकान में रहते थे। हड़प्पा सभ्यता के अन्तर्गत लोगों ने दुर्लभ नागरिक सुविधाओं का उपभोग किया।

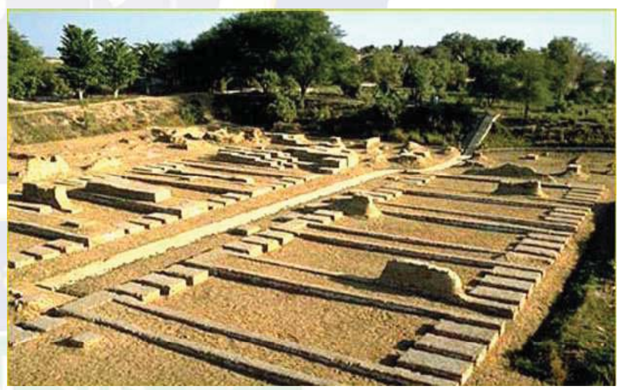

मोहनजोदड़ो का अन्नागार

लोथल का गोदीवाड़ा

धौलावीरा का स्टेडियम

प्रश्न: सिंधु घाटी सभ्यता की नगरीय आयोजना और संस्कृति ने किस सीमा तक वर्तमान युगीन नगरीकरण को निवेश (Input) प्रदान किये हैं? चर्चा कीजिए। (UPSC-2014)

उत्तर: सिंधु घाटी की सभ्यता ने, जो भारतीय उपमहाद्वीप में पहली नगरीय क्रांति का प्रतिनिधित्व करती थी, भारत के भावी नगरीकरण पर भी अपना प्रभाव छोड़ा। इसकी नगर निर्माण योजना तथा नगरीय जीवन पद्धति का कुछ हद तक बाद में भी अनुकरण किया जाता रहा।

नगर निर्माण में हड़प्पाई लोगों ने आयोजना (Planning) को विशेष महत्व दिया था। प्रत्येक महत्वपूर्ण नगर दो खंडों में विभाजित था- दुर्ग एवं निचला शहर। वर्तमान नगरों में भी सरकारी संस्थानों को रिहायसी इलाके से पृथक रखने की पद्धति प्रचलित है। हड़प्पा सभ्यता के अंतर्गत सड़क, गली एवं जल प्रबंधन अनुकरणीय था। वर्तमान नगरों में भी मुख्य सड़क के निर्माण पर विशेष बल दिया जाता है। उसी प्रकार, गली एवं जल निकासी की प्रणाली भी नगर निर्माण की आदर्श योजना में शामिल होती है। फिर हड़प्पाई लोगों ने बड़ी संख्या में पकाई गई ईंटों का प्रयोग किया था वर्तमान में भी निर्माण कार्य में ईंटों का महत्व बना हुआ है। इसके अतिरिक्त हड़प्पाई नगरों की ही तरह वर्तमान भारतीय नगरों का भी बहु- सांस्कृतिक चरित्र है।

किंतु कुछ बातों में हम हड़प्पाई नगरीकरण से सीख नहीं ले पाए हैं। उदाहरण के लिए, हड़प्पाई लोगों का गवर्नेंस कहीं बेहतर प्रतीत होता है तथा उनका क्रियान्वयन पक्ष भी चुस्त रहा है। अंत में वर्तमान नगर निर्माण की रूपरेखा तैयार करते हुए हमें हमें इस बात के प्रति सावधान रहने की की जरूरत है कि आखिर क्यों अपनी तमाम विलक्षणताओं के बावजूद भी हड़प्पाई नगर धारणीय (Sustainable) नहीं हो सके थे।

■ **हडप्पाई संस्कृति (धर्म एवं कला):**

धर्म के दो रूप होते हैं- अनुष्ठानिक (कर्मकांड) एवं तत्व चिंतन (दार्शनिक पक्ष)। साहित्यिक साक्ष्य के अभाव में हमें हड़प्पाई धर्म का दार्शनिक पक्ष तो ज्ञात नहीं हो पाता, परन्तु पुरातत्व के आधार पर हम हड़प्पाई धर्म के कर्मकांड वाले पक्ष को जान सके हैं, जो इस प्रकार है-

- इस सभ्यता में लोग **उत्पादक शक्ति की पूजा** करते थे अर्थात् मातृ देवी की पूजा, पृथ्वी की पूजा, अग्नि की पूजा अथवा यज्ञ, इन सभी का संबंध उत्पादक शक्ति से रहा था।
- हड़प्पाई धर्म का स्वरूप **बहुदेववादी** था अर्थात् एक से अधिक देवताओं की पूजा होती थी, यथा- पाशुपत शिव की पूजा, मातृ देवी की पूजा, पृथ्वी पूजा, पशु पूजा, नाग पूजा, अग्नि पूजा, जल पूजा आदि।
- हड़प्पाई लोगों में संभवत: **मूर्ति पूजा** का प्रचलन था क्योंकि बड़ी संख्या में प्रस्तर, ताँबे एवं कांस्य तथा पकाई गयी मिट्टी की मूर्तियाँ मिली हैं, परन्तु उस काल में मंदिर का साक्ष्य नहीं मिलता। फिर मूर्ति पूजा का संबंध **भक्ति-भाव** से जोड़ा जाता है।
- धर्म के क्षेत्र में **स्त्री तत्व की प्रधानता** दिखती है।
- बच्चे के गले में पड़ी ताबीज़ जीववाद की ओर संकेत करती है।

■ **भारतीय धार्मिक परम्परा में हड़प्पाई धर्म की विरासत:**

यद्यपि हड़प्पाई नगरों का पतन हो गया, परन्तु हड़प्पाई धर्म के तत्व भारतीय धार्मिक परम्परा में घुल-मिल गए। जिसे हम वर्तमान में हिन्दू धर्म के नाम से जानते हैं, उस पर केवल वैदिक धर्म का ही नहीं, बल्कि हड़प्पाई धर्म का भी प्रभाव है। हड़प्पाई धर्म की कुछ प्रमुख विशेषताएँ, यथा- मातृ देवी की पूजा, पाशुपत शिव की पूजा, अग्नि पूजा, जल पूजा, पशु पूजा, सर्प पूजा, मूर्ति पूजा, भक्ति की अवधारणा, सभी वर्तमान हिन्दू धर्म में दिखलाई पड़ती हैं।

पशुपति मुहर एवं मातृदेवी की मूर्ति

■ **हड़प्पाई कला की विशेषताएँ:**

हड़प्पाई लोगों की सौन्दर्य अभिरुचि उनकी कला के माध्यम से व्यक्त होती है। हड़प्पाई लोगों ने बड़ी संख्या में कलात्मक उत्पाद दिए; ये कलाकृतियाँ मुहर, मनके, कांस्य कला, प्रस्तर कला तथा मृण्मूर्तियों के रूप में मिलती है।

हडप्पाई लोगों की मुहरें सामान्यत: सेलखड़ी से निर्मित होती थीं। मुहरें वर्गाकार अथवा आयताकार होती थीं तथा उन पर पशु की आकृति एवं लिपि उत्कीर्ण की जाती थी। इनका उपयोग व्यापारिक वस्तुओं की पहचान के लिए होता था। उसी प्रकार, दूसरे तरह की कलाकृतियाँ मनके थीं। अधिकांश मनके

सेलखड़ी (Steatite) से निर्मित होते थे। हालांकि अर्द्ध बहुमूल्य पत्थर तथा सोने एवं चाँदी से निर्मित मनके के भी साक्ष्य मिलते हैं। उनका उपयोग गले में पहनने वाले आभूषण की तरह होता था।

धातुकला में हड़प्पाई लोग काफी आगे थे। हमें ताँबे और काँसे से निर्मित मानव तथा पशु मूर्तियाँ मिलती हैं। इनमें एक बेहतरीन मूर्ति है चन्हुदड़ो से प्राप्त नर्तकी की कांस्य मूर्ति। यह कला का उत्कृष्ट उदाहरण है। इसके निर्माण में द्रवी मोम विधि का प्रयोग दिखता है।

हड़प्पा सभ्यता में हमें **प्रस्तर कला** का भी उदाहरण मिलता है। अधिकांश प्रस्तर मूर्तियाँ खण्डित अवस्था में मिली हैं। इनमें बेहतरीन मूर्ति है मोहनजोदड़ो से प्राप्त दाढ़ी वाले साधु की मूर्ति, जिसने तिपतिया चादर ओढ़ रखी है।

मोहनजोदड़ो से प्राप्त पुरोहित एवं नर्तकी की मूर्ति

हड़प्पा सभ्यता के अन्तर्गत बड़ी संख्या में मृण्मूर्तियाँ मिली हैं। इनमें मानव, पशु, पक्षी सभी की मूर्तियाँ मिली हैं। सामान्यत: पुरुषों की तुलना में महिलाओं की मूर्तियों की संख्या अधिक है। ये मिट्टी की पकाई गई मूर्तियाँ होती थीं। इनका उपयोग या तो पूजा के लिए होता था या फिर इनका उपयोग बच्चों के खिलौने के रूप में होता था। किन्तु हाल में एक धारणा उभरकर आई है कि प्राय: नगरीय जीवन में मृण्मूर्तियों का उपयोग घरों को सजाने के लिए होता है।

हड़प्पाई मुहर एव मनके

■ भारतीय सभ्यता में हड़प्पाई सभ्यता की विरासत:

हड़प्पा सभ्यता एक उन्नत नगरीय चरण को दर्शाती है। लगभग 1900 ई.पू. में इस सभ्यता का पतन हुआ। आरम्भ में सभ्यता के पतन का अर्थ सभ्यता की समाप्ति से लगाया गया था, परन्तु हाल के दशकों में यह धारणा बदल चुकी है। अब सभ्यता के पतन का अर्थ लगाया जाता है सभ्यता के **रूप परिवर्तन** से अर्थात् यह नगरीय चरण से ग्रामीण चरण में पहुँच गई, किन्तु समाप्त नहीं हुई।

अगर हम गहराई से परीक्षण करते हैं तो पाते हैं कि इस सभ्यता की विरासत आज भी हमारी संस्कृति में मौजूद है। इसे निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है-

1. अगर हम कृषि के क्षेत्र में देखते हैं, तो हल का प्रयोग, फसलों के प्रकार तथा खेती करने का तरीका सभी पर हड़प्पाई प्रभाव दिखता है।
2. शिल्प एवं कारीगरी के क्षेत्र में मिट्टी के बर्तन के निर्माण से लेकर ताँबे और काँसे को गलाने की पद्धति हड़प्पा सभ्यता से आज तक चली आ रही है।
3. नगरीय स्थल के आयोजन; यथा- सड़कों, नालियों, गलियों और घरों के निर्माण पर भी हड़प्पाई प्रभाव दिखता है।
4. लोगों के खान-पान, रहन-सहन, सौन्दर्य प्रसाधन सभी पर हड़प्पाई प्रभाव देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए, कागज, सिन्दूर आदि का प्रयोग।
5. धर्म के क्षेत्र में हड़प्पाई धर्म को हिन्दू धर्म का पूर्वगामी माना जाता है। इसमें पाशुपत शिव की पूजा से लेकर, मातृ देवी की पूजा आदि सभी विशेषताएँ मौजूद थीं।
6. कला के क्षेत्र में भी हड़प्पाई प्रभाव को कम करके नहीं देखा जा सकता। उदाहरण के लिए, ताम्र और कांस्य मूर्तियाँ, प्रस्तर से निर्मित मूर्तियाँ और मृण्मूर्तियाँ सभी हड़प्पाई परम्परा से लेकर वर्तमान काल तक चलती रही हैं।

■ हड़प्पाई लोगों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण:

- हड़प्पाई लोगों को अंकमाला का ज्ञान था।
- वे गणना के लिए 16 गुणकों का प्रयोग करते थे।
- हड़प्पाई लोग गणना में दशमलव पद्धति एवं द्विभाजन प्रणाली का प्रयोग करते थे।
- माप के लिए फिट एवं क्यूबिक का उपयोग किया जाता था।
- उन्हें ग्रह एवं नक्षत्रों का भी ज्ञान था।
- हड़प्पाई लोगों को ताँबे एवं टिन को गलाकर कांस्य बनाने की पद्धति का ज्ञान था।

प्रश्न: मिस्र, मेसोपोटामिया और यूनान की सभ्यता के विपरीत भारत की प्राचीन संस्कृति अविच्छिन्न रूप में चलती रही। टिप्पणी कीजिए।

उत्तर: अन्य समकालीन संस्कृतियों की तुलना में भारत की प्राचीन संस्कृति की स्थिति निश्चय ही भिन्न रही। जहाँ मिस्र, मेसोपोटामिया और यूनान की प्राचीन संस्कृतियाँ एक बार

विस्मृत होकर फिर दुबारा प्रकट हुई थीं, वहीं भारत की प्राचीन संस्कृति कुछ व्यवधानों के बावजूद निरन्तर चलती रही।

मिस्र एवं मेसोपोटामिया में एशिया की प्राचीनतम सभ्यताएँ विकसित हुई थीं, परन्तु इस्लाम ने उन क्षेत्रों को जीतकर उनका तीव्र इस्लामीकरण कर दिया। पुरानी सभ्यताएँ दब गयीं और आधुनिक काल में आकर ही लोग उन सभ्यताओं से परिचित हो सके। उसी प्रकार, यूनान और रोम की क्लासिकल सभ्यता यूरोप में ईसाई धर्म के प्रसार के साथ दब गयी थी। फिर आगे 16वीं सदी में यूरोपीय पुनर्जागरण के पश्चात् ही लोग उस क्लासिकल सभ्यता की धरोहर को समझ सके।

इसके विपरीत भारत की प्राचीन संस्कृति कभी भी विस्तृत नहीं हुई। आरम्भ में जो भी बाह्य आक्रमणकारी आए, वे भारतीय संस्कृति में ही घुल मिल गये। फिर 1000 ई. के पश्चात् इस्लाम एक आक्रामक धार्मिकता लेकर आया, परन्तु वह भारत में बड़े पैमाने पर कोई धर्मान्तरण नहीं करा सका। इसलिए भारत में मुस्लिम अल्पसंख्यक बने रहे और भारत की प्राचीन संस्कृति का इस्लामीकरण नहीं हो सका। मस्जिद के साथ मंदिर का सह-अस्तित्व बना और 5000 वर्ष पुराने वैदिक मंत्र हिन्दुओं के घरों में पढ़े जाते रहे।

इस प्रकार, हम पाते हैं कि भारत की प्राचीन संस्कृति विलक्षण एवं विशिष्ट बनी रही।

मॉडल प्रश्नः

1. *'वैसे तो लगभग 1900 ई.पू. तक हड़प्पा सभ्यता का पतन हो गया, परन्तु हड़प्पा सभ्यता की विरासत भारतीय संस्कृति में बाद में भी विद्यमान रही।' इस कथन का परीक्षण कीजिए।*

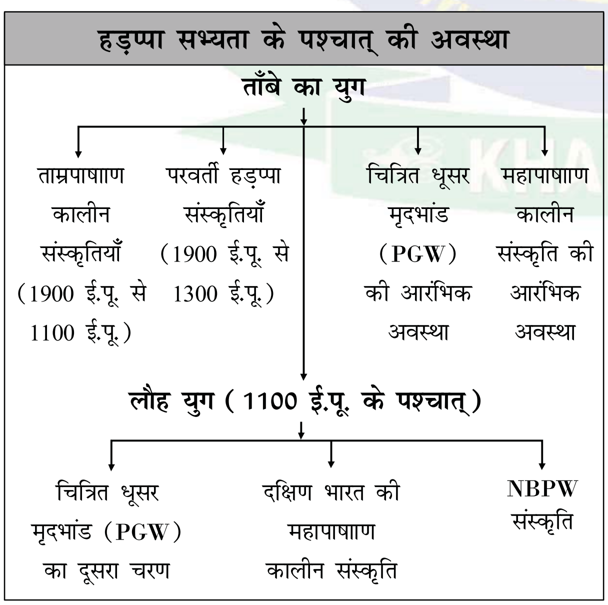

हड़प्पा सभ्यता के पतन के पश्चात् भारतीय उपमहाद्वीप में विभिन्न संस्कृतियों की निम्नलिखित स्थिति रही। जैसाकि हम जानते हैं ताँबे का चलन लगभग 1100 ई.पू अथवा 1000 ई.पू. तक रहा था, उसके बाद लोहे का प्रचलन आरम्भ हुआ। अतः विभिन्न संस्कृतियों को ताँबे के चरण एवं लौह चरण में बाँटकर देख सकते हैं।

- **ताम्रयुगः**- इसके अन्तर्गत हम निम्नलिखित संस्कृतियों की चर्चा कर सकते हैं-

- **ताम्रपाषाण कालीन संस्कृतियाँ**- हड़प्पा सभ्यता के पतन के पश्चात् हड़प्पाई शिल्पी विभिन्न क्षेत्रों में फैल गए। इससे ताँबे के ज्ञान का और अधिक प्रसार हुआ। यह एक प्रमुख कारण था कि हड़प्पा सभ्यता के पतन के पश्चात् ताम्रपाषाण कालीन बस्तियों और संस्कृतियों का और भी अधिक प्रसार देखा गया। उदाहरण के लिए, मध्य भारत में कायथा संस्कृति एवं मालवा संस्कृति, दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान में अहार अथवा बनास संस्कृति तथा महाराष्ट्र में जोर्वे संस्कृति।
- **परवर्ती हड़प्पा संस्कृति**- ये संस्कृतियाँ भी अपने स्वरूप में ताम्रपाषाण कालीन थीं, परन्तु चूँकि इनका विकास हड़प्पा सभ्यता वाले क्षेत्र में हुआ था और ये हड़प्पा सभ्यता की विरासत को लेकर चल रही थीं, इसलिए इन्हें परवर्ती हड़प्पा संस्कृति का नाम दिया जाता है। इन संस्कृतियों में हम पंजाब, हरियाणा एवं बहावलपुर में कब्रगाह H-संस्कृति, चन्हुदड़ो में झूकर संस्कृति, गुजरात में लाल चमकीले मृद्भाण्ड संस्कृति का विवरण दे सकते हैं।
- **चित्रित धूसर मृदभांड (पी.जी.डब्ल्यू) संस्कृति की आरंभिक अवस्था**- इसका संबंध वैदिक आर्यों से जोड़ा जाता है। यह संस्कृति दो चरणों में विकसित हुई- पहला चरण ताम्र चरण है, जबकि दूसरा चरण लौह चरण। चित्रित धूसर मृदभांड स्थल ऊपरी दोआब के अतिरिक्त गंगा-सिंधु विभाजक तथा सतलज नदी के किनारे तक फैले हुए थे। अब तक इससे संबंधित लगभग 750 स्थल प्रकाश में आये हैं। इनमें से चार स्थल ऐसे हैं जहाँ से चित्रित धूसर मृद्भांड के साक्ष्य तो मिलते हैं, परन्तु लोहे के उपकरण प्राप्त नहीं होते हैं, जैसे-भगवानपुरा, दधेरी, नागर तथा कटपालन। अतः इन स्थलों को परवर्ती हड़प्पा सभ्यता का विस्तार माना गया है।
- **महापाषाण कालीन संस्कृति की आरम्भिक अवस्था**- महापाषाण कालीन संस्कृति के लोग सम्पूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप में फैले हुए थे। महापाषाण कालीन संस्कृति ऐसे समुदाय से जुड़ी हुई थी, जो मृत्यु के बाद शानदार कब्र भी बनाते थे। इस संस्कृति का आरंभिक चरण भी ताम्र चरण से जुड़ा हुआ है। मेगालिथिक लोगों से पूर्व, नवपाषाणिक तथा ताम्रपाषाणिक काल के लोगों ने घर के अंदर ही

शवाधान की पद्धति जारी रखी थी, किंतु मेगालिथिक संस्कृति से जुड़े हुए लोगों ने अपनी कब्र रिहायशी इलाके से बाहर स्थापित की।

- भारतीय उपमहाद्वीप में मेगालिथिक स्थल की सघन अभिव्यक्ति दक्षिण भारत में हुई है, किन्तु भारतीय उपमहाद्वीप के अन्य क्षेत्रों में भी मेगालिथिक स्थल प्राप्त हुए हैं। उदाहरण के लिए, विन्ध्य क्षेत्र में इलाहाबाद, बाँदा, मिर्जापुर और वाराणसी, पूर्वोत्तर भारत में मणिपुर से मेगालिथिक स्थल के अनेक साक्ष्य मिले हैं। इसी प्रकार जयपुर के निकट देवासा तथा फतेहपुर सीकरी के निकट खेड़ा से भी मेगालिथिक स्थल प्राप्त हुए हैं।

■ **लौह युग (1100 ई.पू. के पश्चात्)**

- **पी.जी.डब्ल्यू संस्कृति का दूसरा चरण**– इस संस्कृति का पहला चरण ताम्र चरण से जुड़ा हुआ था तथा दूसरा चरण लौह युग से। इस संस्कृति का आरंभिक साक्ष्य अहिच्छत्र से प्राप्त हुआ है। जखेरा से खेती के उपकरण; जैसे– हँसिया तथा कुदाल की प्राप्ति हुई है। हस्तिनापुर से चावल तथा अतरंजीखेड़ा से जौ एवं गेहूँ प्राप्त हुआ है।
- **दक्षिण भारत की महापाषाण कालीन संस्कृति**– यह संस्कृति आवश्यक रूप में लौह चरण से जुड़ी हुई थी, उदाहरण के लिए, मास्की, ब्रह्मगिरी, नागार्जुनकोंडा, इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र में जूनापानी, माहुरझारी आदि।
- **एन.बी.पी.डब्ल्यू संस्कृति**– लगभग 800 ई.पू. में उत्तरी काले पॉलिशदार मृदभांड संस्कृति (NBPW) का विकास हुआ। यह बुद्ध काल से संबंधित थी तथा यह सीधे लौह चरण में आरम्भ हुई थी। इससे संबंधित स्थलों का मुख्य जमाव पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा उत्तरी बिहार में देखा जा सकता है, किन्तु इन मृदभांडों का विस्तार पश्चिम में तक्षशिला तथा दक्षिण में अमरावती तक भी देखा जा सकता है। कालांतर में यह संस्कृति द्वितीय नगरीकरण, पक्की ईटों एवं आहत मुद्रा से जुड़ जाती है।

■■■